डा० नथमल टाटिया
निदेशक, प्राकृत जैनशास्त्र और अहिंसा-शोधसंस्थान, मुजफ्फरपुर, बिहार.

'मोक्षमार्गस्यनेतारम्' के कर्ता पूज्यपाद देवनन्दि

पूज्यपाद देवनन्दिकृत सर्वार्थसिद्धि नामक तत्त्वार्थवृत्ति के प्रारम्भ में निम्नांकित श्लोक उपलब्ध होता है :

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृताम्, ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये.

इस श्लोक के कर्तृत्व के बारे में कुछ वर्ष पहले ऊहापोह चला था और यह सिद्ध करने की चेष्टा की गई थी कि इसके कर्ता तत्त्वार्थसूत्रकार आचार्य उमास्वामी हैं.[1] पर वस्तुस्थिति अन्यथा प्रतीत होती है. (१) आप्तपरीक्षा में आचार्य विद्यानन्द ने इस श्लोक के कर्ता के लिए सूत्रकार[2] और शास्त्रकार[3] ये दोनों शब्द प्रयुक्त किये हैं. अतएव संशय होना स्वाभाविक था. पर इन्हीं विद्यानन्द के तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक के प्रारम्भ में की गई परापरगुरु-प्रवाह विषयक आध्यान की चर्चा से तथा आप्तपरीक्षा गत प्रयोगों से यह स्पष्ट सिद्ध हो जाता है कि सूत्रकार शब्द केवल आचार्य उमास्वामी के लिए ही प्रयुक्त नहीं होता था, इसका प्रयोग दूसरे आचार्यों के लिए भी किया जाता था. (२) उसी तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक के अन्तर्गत तत्त्वार्थसूत्र के प्रथमसूत्र की अनुपपत्ति-उपस्थापन और उसके परिहार की चर्चा से भी यह स्पष्ट फलित होता है कि आचार्य विद्यानन्द के सामने तत्त्वार्थसूत्र के प्रारम्भ में 'मोक्षमार्गस्य नेतारम्' श्लोक नहीं था. (३) अष्टसहस्री तथा आप्तपरीक्षान्तर्गत कुछ विशेष उल्लेखों से यह सिद्ध होता है कि आचार्य विद्यानन्द के मतानुसार इसी श्लोक के विषयभूत आप्त की मीमांसा स्वामी समन्तभद्र ने अपनी आप्तमीमांसा में की है. इन तीनों मुद्दों पर हम क्रमशः विचार करेंगे.

सूत्रकार-शास्त्रकार

परापरगुरुप्रवाह की चर्चा के प्रसंग में आचार्य विद्यानन्द ने तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक के प्रारम्भ (पृ० १) में अपरगुरु की व्याख्या इस प्रकार की है : अपरगुरुर्गणधरादिः **सूत्रकारपर्यन्तः**. यहां सूत्रकार शब्द से केवल आचार्य उमास्वामी का बोध अभिप्रेत नहीं हो सकता, पर वे तथा उनके पूर्व तथा पश्चाद्वर्ती अन्य आचार्य भी यहां अभिप्रेत हैं. अन्यथा आचार्य उमास्वामी के बाद के आचार्यों को आध्यान का विषय बनाने की परम्परा असंगत प्रमाणित होगी. आचार्य विद्यानन्द स्वयं अपनी अष्टसहस्री के प्रारम्भ में स्वामी समन्तभद्र का जो अभिवन्दन करते हैं वह भी असंगत ठहरेगा. आचार्य वादिदेवसूरि अपने स्याद्वादरत्नाकर ग्रंथ के आदि में आचार्य विद्यानन्द के—एतेनापरगुरुर्गणधरादिः **सूत्रकारपर्यन्तो** व्याख्यातः[4]—इस वचन की प्रतिध्वनि इस प्रकार करते हैं—एतेनापरगुरुरपि गणधरादि**रस्मद्गुरुपर्यन्तो** व्याख्यातः[5].

---

१. देखो—अनेकान्त, वर्ष ५, (किरण ६-७, ८-९ तथा १०-११).
२. आप्तपरीक्षा, पृ० १२—किं पुनस्तत्परमेष्ठिनो गुणस्तोत्रं शास्त्रादौ सूत्रकाराः प्राहुः.
३. वही, पृ० २—कस्मात्पुनः परमेष्ठिनः स्तोत्रं शास्त्रादौ शास्त्रकाराः प्राहुः.
४. तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक, पृ० १.
५. स्याद्वादरत्नाकर; पृ० ५.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतएव उक्त प्रसंग में सूत्रकार शब्द से केवल आचार्य उमास्वामी अभिप्रेत न होकर तत्त्वोपदेशक सभी आचार्य अभिप्रेत हैं—यह निःसन्दिग्ध सिद्ध होता है. तत्त्वप्रतिपादक शास्त्र के प्रारम्भ में अखिल तत्त्वज्ञान के प्रभवस्थान परम गुरु तीर्थंकर तथा तत्त्वार्थनिर्णय में सहायभूत गणधरादि गुरुपरम्परा के प्रति कृतज्ञता निवेदन करना ही आध्यान है. और वही शास्त्रसिद्धि का हेतु है. हां, अपरगुरुप्रवाह के अन्तर्गत सूत्रकारों में आचार्य उमास्वामी का स्थान प्रमुख है, जैसा कि आचार्य हेमचन्द्र ने अपनी प्रमाणमीमांसा (पृ० १) में कहा है—प्रेक्षस्व वाचकमुख्यविरचितानि सकलशास्त्र-चूडामणि-भूतानि **तत्त्वार्थसूत्राणीति**. आप्तपरीक्षागत आचार्य विद्यानन्द की यह उक्ति भी इस स्थल पर मननीय है—न हि परम्परया मोक्षमार्गस्य प्रणेता गुरुपर्वक्रमाविच्छेदादधिगततत्त्वार्थशास्त्रार्थोऽप्यस्मदादिभिः साक्षाद्विश्वतत्त्वज्ञतायाः समाश्रयः साध्यते प्रतीतिविरोधात्, किं तर्हि साक्षान्मोक्षमार्गस्य सकलबाधकप्रमाणरहितस्य यः प्रेणता स एव विश्व-तत्त्वज्ञताश्रयः **तत्त्वार्थसूत्रकारैरुमास्वामिप्रभृतिभिः** प्रतिपाद्यते भगवद्भिः.[1] यहां तत्त्वार्थ शब्द और सूत्रकार शब्द—ये दोनों व्यापक अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं. अन्यथा प्रभृति शब्द निरर्थक होगा, कारण तत्त्वार्थ नामक ग्रंथ के सूत्रकार के मूलरूप में केवल उमास्वामी ही प्रसिद्ध हैं, अन्य कोई आचार्य नहीं. हां तत्त्वार्थ के वृत्तिकार, वार्तिककार आदि के रूप में अन्य आचार्य भी प्रसिद्ध हैं. अतएव उक्त स्थल में अपने व्यापक अर्थ में ही सूत्रकार शब्द प्रयुक्त हुआ है—यह स्वतः सिद्ध है. तत्त्वार्थ शब्द भी यहां सामान्य अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, न कि ग्रंथविशेष के अर्थ में. अतएव सन्मतिप्रकरण आदि के कर्ता आचार्य सिद्धसेन दिवाकर आदि का समावेश भी तत्त्वार्थसूत्रकार शब्द में हो जाता है. सन्मतिप्रकरण सन्मतिसूत्र के नाम से प्रसिद्ध है. आप्तपरीक्षा के निम्नोक्त वाक्यों में भी सूत्रकार शब्द ऐसे ही व्यापक अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं—गुरुपर्वक्रमात् **सूत्रकाराणां** परमेष्ठिनः प्रसादात्......श्रेयोमार्गस्य संसिद्धिरभिधीयते (पृ० ८), परमेष्ठिनः **प्रसादात्सूत्रकाराणां** श्रेयोमार्गस्य संसिद्धेर्युक्तं शास्त्रादौ-परमेष्ठिगुणस्तोत्रम् (पृ० ६).

प्रस्तुत प्रसंग में **सूत्र** और **शास्त्र** के स्वरूपविषयक आचार्य विद्यानन्द का निम्नोक्त उल्लेख विवेचनीय है—वर्णात्मकं हि पदं, पदसमुदायविशेषः सूत्रं, सूत्रसमूहः प्रकरणं, प्रकरणसमितिराह्निकं, आह्निकसंघातोऽध्यायः, अध्यायसमुदायः शास्त्रमिति शास्त्रलक्षणम्.[2] दशाध्यायीरूप सम्पूर्ण शास्त्र के कर्ता होने के कारण आचार्य उमास्वामी शास्त्रकार हैं, और पदसमुदायविशेष रूप सूत्रों के कर्ता होने के कारण वे सूत्रकार भी हैं. इसी तरह दूसरे आचार्यों (उदाहरणार्थ आचार्य हेमचन्द्र, वादिदेवसूरि आदि) को भी पदसमुदायविशेष रूप सूत्रों के कर्ता के रूप में सूत्रकार और सम्पूर्ण ग्रन्थ के कर्ता रूप से शास्त्रकार कहा जा सकता है. इस प्रसंग में सूत्र का निम्नोक्त लक्षण भी ध्यान-योग्य है :

अल्पाक्षरमसन्दिग्धं सारवद् विश्वतोमुखम्,
अस्तोभमनवद्यं च सूत्रं सूत्रविदो विदुः ।[3]

इन सारी बातों को ध्यान में रख कर ही आचार्य विद्यानन्द 'मोक्षमार्गस्य नेतारम्' श्लोक के रचयिता को कभी एक अखण्ड अर्थ के वाचक विशिष्ट पदसमुदाय रूप इसी श्लोक के कर्ता के रूप में **सूत्रकार** और कभी सम्पूर्ण तत्त्वार्थशास्त्र के रचयिता रूप से **शास्त्रकार** कहते हैं. मोक्षमार्गस्य नेतारम् श्लोक के रचयिता को **तत्त्वार्थशास्त्रकार** कहने में भी कोई बाधा नहीं, कारण उमास्वामिरचित मूल तत्त्वार्थसूत्र की तरह उस पर स्वरचित वार्तिक तथा अन्य व्याख्यान ग्रन्थ को भी शास्त्र कहना आचार्य विद्यानन्द को इष्ट है. उन्होंने स्पष्ट रूप से निम्नोक्त उद्धरण में यह बात कह भी दी है—तत्त्वार्थविषयत्वाद्धि तत्त्वार्थो ग्रन्थः प्रसिद्धः.........प्रसिद्धे च तत्त्वार्थस्य शास्त्रत्वे **तद्वार्तिकस्य** शास्त्रत्वं सिद्धमेव

१. आप्तपरीक्षा, पृ० २६०-१ (पादटिप्पण सहित). पण्डित श्रीदरबारीलालजी कोठिया सम्पादित पाठ संगत प्रतीत नहीं होता. उनके पाठ में—तत्त्वार्थसूत्रकारैरुमास्वामिप्रभृतिभिः—यह अंश नहीं है तथा भगवद्भिः के स्थान पर भगवतः है. प्रस्तुत उद्धरण में आये हुए अस्मदादिभिः अंश की संगति के लिये परित्यक्त अंश आवश्यक है. तत्त्वार्थसूत्रकारैः के स्थान पर तत्त्वार्थसूत्रकारादिभिः पाठ भी संभव नहीं, कारण आदि शब्द विवक्षित प्रकर्ष का बाधक होगा. 'भगवद्भिः' पाठ की आवश्यकता भी स्पष्ट है.

२. तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक, पृ० २ । देखो न्यायवार्तिक (न्यायदर्शन, पृ० ४).

३. युक्तिदीपिका, पृ० ३.
वाचस्पति मिश्रकृत न्यायवार्तिकतात्पर्यटीका (न्यायदर्शन, पृ० ७०), में उद्धृत.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तदर्थत्वात्.........तदनेन तद्व्याख्यानस्य शास्त्रत्वं निवेदितम्.[1] अतएव प्रस्तुत श्लोक जिस ग्रन्थ के आदि में पाया जाता है वह भी तत्त्वार्थविषयक होने के कारण तत्त्वार्थशास्त्र है. अर्थात् सर्वार्थसिद्धि को तत्त्वार्थशास्त्र तथा उसके रचयिता को तत्त्वार्थशास्त्रकार कहने में कोई बाधा नहीं.

'मोक्षमार्गस्य नेतारम्' श्लोक में सूत्र के सभी लक्षण विद्यमान हैं. तभी तो स्वामी समन्तभद्र जैसे श्रेष्ठ चिन्तक और आचार्य विद्यानन्द जैसे गंभीर तार्किक इस श्लोक से प्रेरणा लेकर क्रमशः आप्तमीमांसा और आप्तपरीक्षा की रचना करते हैं. अतएव इसे **सूत्र** और इसके रचयिता को **सूत्रकार** कहने में कोई असंगति लक्षित नहीं होती, चाहे वे आचार्य उमास्वामी हों या पूज्यपाद देवनन्दि. ईश्वरकृष्ण प्रणीत सांख्यकारिका प्रसिद्ध है. इसकी प्राचीन टीका युक्तिदीपिका में ईश्वरकृष्ण प्रणीत कई कारिकांशों को सूत्रसंज्ञा दी गई है.[2] आचार्य धर्मकीतिरचित प्रमाणवार्तिक दिग्नागकृत प्रमाण-समुच्चय की व्याख्या है.[3] पर प्रमाणवार्तिक के टीकाकार कर्णगोमी ने प्रमाणवार्तिक के वाक्य को सूत्र[4] तथा धर्मकीति को सूत्रकार[5] कहा है. इस प्रसंग में आचार्य विद्यानन्द उद्धृत--सूत्रं हि सत्यं सयुक्तिकं चोच्यते हेतुमत्तथ्यमिति सूत्रलक्षणवचनात्[6]—यह वचन भी स्मरणीय है.

आचार्य उमास्वामी से भिन्न अन्य आचार्यों को **तत्त्वार्थसूत्रकार** कहा जा सकता है या नहीं ? हम देख चुके हैं, आचार्य विद्यानन्द को सूत्रकार शब्द से आचार्य उमास्वामी से अतिरिक्त अन्य तत्त्वोपदेशक आचार्य भी अभिप्रेत हैं. अतएव अन्य आचार्यों को भी **तत्त्वार्थसूत्रकार** कहना असंगत नहीं. इस प्रकार आप्तपरीक्षा की—तत्त्वार्थसूत्रकारैरुमास्वामिप्रभृतिभिः[7]—इस उक्ति की भी संगति बैठ जाती है. पूज्यपाद देवनन्दि रचित सर्वार्थसिद्धि वृत्ति के महत्त्वपूर्ण सूत्रात्मक लक्षणवाक्यों की व्याख्या आचार्य अकलंक ने अपने तत्त्वार्थवार्तिक (राजवार्तिक) में की है. अतएव उसे तत्त्वार्थसूत्र तथा उसके कर्ता को सूत्रकार या तत्त्वार्थसूत्रकार कहने में कोई बाधा नहीं होनी चाहिए.

अब हम आप्तपरीक्षागत और एक उल्लेख पर विचार करेंगे. आप्तपरीक्षा की द्वितीय कारिका के अन्वय के प्रसंग में कहा गया है—श्रेयसो मार्गः श्रेयोमार्गः..........तस्य संसिद्धिः सम्प्राप्तिः सम्यग् ज्ञप्तिर्वा, सा हि परमेष्ठिनः प्रसादाद्-भवति मुनिपुंगवानां यस्मात्तस्मात्ते मुनिपुंगवाः **सूत्रकारादयः** शास्त्रस्यादौ तस्य परमेष्ठिनो गुणस्तोत्रमाहुरिति सम्बन्धः.[8] इस उद्धरण में सूत्रकारादयः शब्द के अन्तर्गत आदि शब्द से कौन अभिप्रेत है? अर्थात् सूत्रकार शब्द द्वारा वृत्तिकार, वार्तिककार आदि का भी बोध यदि मान लें तब आदि शब्द से किसका ग्रहण इष्ट होगा ? यहाँ आदि शब्द से श्रोता को ले सकते हैं. उपदेष्टा सूत्रकार शास्त्ररचना के पूर्व परापर परमेष्ठी की स्तुति करता है तो शिष्य श्रोता भी उपदेश ग्रहण के पूर्व परापरगुरुप्रवाह की गुणस्तुति अवश्य करता है. अर्थात् प्रस्तुत प्रसंग में श्रोता और व्याख्याता द्वारा परमेष्ठि-गुणस्तोत्र की परम्परा विवक्षित है. आप्तपरीक्षा का निम्नोक्त उद्धरण इस विषय पर प्रकाश डालता है—तस्मान्मोक्ष-मार्गस्य त्तेनारं कर्मभूभृतां भेत्तारं विश्वतत्त्वानां ज्ञातारं वन्दे इति **शास्त्रकारः** शास्त्रप्रारम्भे **श्रोता तस्य व्याख्याता** वा भगवन्तं परमेष्ठिनं परमपरं वा मोक्षमार्गप्रणतृत्वादिभिर्गुणैः संस्तौति, तत्प्रसादाच्छ्रेयोमार्गस्य संसिद्धेः समर्थनात्.[9] यहाँ स्पष्टरूप से कहा गया है, 'मोक्षमार्गस्य नेतारम्' गुणस्तोत्र का कर्ता शास्त्रकार--श्रोता अथवा उसका व्याख्याता—

१. तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक, पृ० २.
२. देखो—युक्तिदीपिका, पृ० २-३.
३. देखो—कर्णगोमिकृत प्रमाणवार्तिकटीका, पृ० ४.
४. वही, पृ० १२.
५. वही, पृ० ८.
६. तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक, पृ० ६.
७. आप्तपरीक्षा, पृ० २६०, पादटिप्पण २.
८. आप्तपरीक्षा, पृ० ७-८.
९. आप्तपरीक्षा, पृ० १३.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शास्त्रप्रारम्भ में पर-अपर परमेष्ठी की स्तुति मोक्षमार्गप्रणेतृत्त्वादि गुणों द्वारा करता है. उक्त उद्धरणगत श्रोता और व्याख्याता शब्द द्वारा आचार्य विद्यानन्द ने यह स्पष्ट कर दिया है कि श्रोता तथा व्याख्याता दोनों शास्त्रश्रवण और शास्त्रव्याख्यान के पूर्व परापरपरमेष्ठी का गुणस्मरण करते हैं.

उपरोक्त चर्चा का उद्देश्य केवल इतना ही सिद्ध करना है कि सूत्रकार शब्द का अर्थ नियमेन तत्त्वार्थसूत्रकार उमास्वामी तक सीमित नहीं है, पर प्रसंग की संगति के अनुरूप उसका अर्थ करना पड़ेगा. उदाहरणार्थ, आप्तपरीक्षा के निम्नोक्त पाठ में सूत्रकार शब्द आचार्य उमास्वामी के सिवाय और किसी आचार्य का बोधक नहीं माना जा सकता—'स गुप्ति-समितिधर्मानुप्रेक्षापरीषहजयचारित्रेभ्यो भवति इति सूत्रकारमतम्.'[1] 'पर-तत्वार्थसूत्रकारैरुमास्वामिप्रभृतिभिः'—इस प्रयोग में सूत्रकार शब्द से केवल आचार्य उमास्वामी का बोध स्वीकार नहीं किया जा सकता.

यहाँ यह प्रश्न स्वाभाविक है—यदि 'मोक्षमार्गस्य नेतारम्' श्लोक आचार्य उमास्वामिविरचित तत्वार्थसूत्र के आदि में नहीं है तो उस श्लोक का कर्ता कौन है तथा आचार्य उमास्वामी का भगवद्गुणस्तोत्र कहां है ? और आचार्य विद्यानन्द द्वारा अपनी आप्तपरीक्षा में पुनः पुनः आवृत्त सूत्रकारों द्वारा कहे गए गुणस्तोत्रविषयक निम्नोक्त कथनों का अभिप्राय क्या है ? उदाहणार्थ :

(क)—..........तस्मात्ते मुनिपुंगवाः **सूत्रकारादयः** शास्त्रस्यादौ तस्य परमेष्ठिनो गुणस्तोत्रमाहुः.—(पृ० ८).

(ख)—ततः परमेष्ठिनः **प्रसादात्सूत्रकाराणां** श्रेयोमार्गस्य संसिद्धेर्युक्तं शास्त्रादौ परमेष्ठिगुणस्तोत्रम्. (पृ० ६).

इसका उत्तर यह है कि किसी सूत्रकार-विशेष के गुणस्तोत्र-विशेष की विवक्षा यहां नहीं है. शास्त्र के आदि में भगवद्-गुणसंस्तवन के औचित्य मात्र का निर्देश है. यदि किसी सूत्र के आदि में गुणस्तोत्र उपलब्ध न हो तो समझना होगा कि वह शास्त्र में निबद्ध नहीं किया गया है. आप्तपरीक्षाकार ने भी कहा है—'न च क्वचित्तत् (भगवद्गुणसंस्तवनं) न क्रियत इति वाच्यं, तस्य शास्त्रे निबद्धस्यानिबद्धस्य मानसस्य वा वाचिकस्य वा विस्तरतः संक्षेपतो वा शास्त्रकारैरवश्यं-करणात्.' अर्थात् आचार्य उमास्वामी या अन्य किसी आचार्य विशेष की विवक्षा न रख कर शास्त्र के आदि में गुणस्तोत्र का सामान्य विधान यहां इष्ट है. आप्तपरीक्षा कारिका ३ (मोक्षमार्गस्य नेतारम् श्लोक) के रूप में वह गुणस्तोत्र-विशेष बताया गया है, जिसे ध्यान में रखकर यह सामान्य विधान किया गया है, और वही आप्तपरीक्षा का आधारभूत सूत्र है. इस श्लोक के प्रवक्ता का निर्देश शास्त्रादौ **सूत्रकाराः** प्राहुः के द्वारा उत्थानिका में किया गया है. पर श्लोकगत वन्दे पद के कर्ता को निर्देश करते हुए आचार्य विद्यानन्द लिखते हैं :

'तस्मान् मोक्षमार्गस्य नेतारं कर्मभूभृतां भेत्तारं विश्वतत्त्वानां ज्ञातारं **वन्दे** इति **शास्त्रकारः शास्त्रप्रारम्भे श्रोता तस्य व्याख्याता वा** भगवन्तं परमेष्ठिनं परमपरं वा मोक्षमार्गप्रणेतृत्वादिभिर्गुणैः **संस्तौति,** तत्प्रसादाच्छ्रेयोमार्गस्य संसिद्धेः समर्थनात्' (पृ० १३).

इस उद्धरण से यह स्पष्ट है कि वन्दे पद के कर्ता के रूप में आप्तपरीक्षाकार को आचार्य उमास्वामी विवक्षित नहीं हैं, किन्तु तत्वार्थशास्त्र के श्रोता अथवा व्याख्यातारूप शास्त्रकार इष्ट हैं. ये शास्त्रकार और उक्त प्रवक्ता सूत्रकार यदि अभिन्न हैं, तो सूत्रकार शब्द से आचार्य उमास्वामी का विवक्षित होना संभव नहीं.

तत्त्वार्थश्लोकवार्तिकगत अनुपपत्ति-उपस्थापन तथा परिहार

उमास्वामिप्रणीत तत्वार्थसूत्र के किसी भी प्राचीन व्याख्याग्रन्थ के आदि में 'मोक्षमार्गस्य नेतारम्' श्लोक की व्याख्या उपलब्ध नहीं है, न पूज्यपाद देवनन्दि स्वयं इसकी व्याख्या करते हैं न आचार्य अकलंक अपने तत्त्वार्थवार्तिक में इसका उल्लेख करते हैं, न आचार्य विद्यानन्द ही अपने श्लोकवार्तिक में.

१. आप्तपरीक्षा, पृ० ६.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपितु आचार्य विद्यानन्द तत्वार्थसूत्र के प्रथमसूत्र की उपपत्ति सिद्ध करने के प्रसंग में, 'वार्तिकं हि सूत्रानामनुपपत्तिचोदना तत्परिहारो विशेषाभिधानं प्रसिद्धम्'[1]—वार्तिक के इस स्वीकृत लक्षण का अनुसरण करते हैं और अनुपपत्ति उपस्थापन प्रस्तुत करते हुए उसका उत्तर इस प्रकार देते हैं :

ननु च तत्त्वार्थशास्त्रस्यादिसूत्रं तावदनुपपन्नं प्रवक्तृविशेषस्याभावेऽपि प्रतिपाद्यविशेषस्य च कस्यचित्प्रतिपित्सायामसत्यामेव प्रवृत्तत्वादित्यनुपपत्तिचोदनायामुत्तरमाह—

प्रबुद्धाशेषतत्त्वार्थे साक्षात्प्रक्षीणकल्मषे ।
सिद्धे मुनीन्द्रसंस्तुत्ये मोक्षमार्गस्य नेतरि ।
सत्यां तत्प्रतिपित्सायामुपयोगात्मकात्मनः ।
श्रेयसा योक्ष्यमाणस्य प्रवृत्तं सूत्रमादिमम् ।

तेनोपपन्नमेवेति तात्पर्यम्.[2]

आचार्य विद्यानन्द के सामने यदि 'मोक्षमार्गस्य नेतारम्' श्लोक उमास्वामिप्रणीत तत्त्वार्थसूत्र के आदि श्लोक के रूप में रहता तो इस स्थल में वे अवश्य उसकी ओर इंगित करते और उसी के आधार पर उत्तर देते. यहाँ यह बात ध्यानयोग्य है कि आचार्य विद्यानन्द के उक्त प्रश्नोत्तर के आधार पूज्यपाद देवनन्दि विरचित सर्वार्थसिद्धि के आदि में उपलब्ध 'मोक्षमार्गस्य नेतारम्' श्लोक उसी सर्वार्थसिद्धि तथा आचार्य अकलंक प्रणीत तत्त्वार्थवार्तिक (राजवार्तिक) के प्रारंभिक वचन हैं, जो क्रमशः निम्न प्रकार हैं :

(क) कश्चिद् भव्यः प्रत्यासन्ननिष्ठः प्रज्ञावान् स्वहितमुपलिप्सुः निर्ग्रन्थाचार्यवर्यमुपसद्य सविनयं पृच्छति स्म.[3]

(ख) उपयोगस्वभावस्यात्मनः श्रेयसा योक्ष्यमाणस्य प्रसिद्धौ सत्यां तन्मार्गप्रतिपित्सोत्पद्यते.[4] यह स्पष्टतया उद्धरण एक की तात्पर्य-व्याख्या है.

यदि 'मोक्षमार्गस्य नेतारम्' श्लोक आचार्य उमास्वामिविरचित होता तो इस प्रसंग में आचार्य विद्यानन्द उस बात का निर्देश आवश्य करते. पर उसका मौन भाव सिद्ध करता है, यह श्लोक आचार्य उमास्वामिविरचित नहीं है.

अष्टसहस्री तथा आप्तपरीक्षा के कुछ विशेष उल्लेख एवं आप्तमीमांसा

स्वामी समन्तभद्ररचित आप्तमीमांसा पर आचार्य अकलंक ने अष्टशती रची तथा अष्टशती पर आचार्य विद्यानन्द ने अष्टसहस्री की रचना की. दो कारिकाओं में मंगलाचरण के समानन्तर आचार्य अकलंक आप्तमीमांसा के प्रथम श्लोक (देवागम-नभोयान) की उत्थानिक में लिखते हैं—देवागमेत्यादि—मंगलपुरस्सरस्तवविषयपरमाप्तगुणातिशयपरीक्षामुपक्षिपतैव स्वयं श्रद्धागुणज्ञतालक्षणं प्रयोजनमाक्षिप्तं लक्ष्यते. तदन्यतरापायेऽर्थस्यानुपपत्तेः. शास्त्रन्यायानुसारितया तथैवोपन्यासात् (पृ० २). इस वाक्य का विश्लेषण करते हुए आचार्य विद्यानन्द कहते हैं, यहाँ ग्रंथ का प्रयोजन और साध्यसाधनसम्बन्ध बताये गये हैं. ग्रंथकारगत श्रद्धागुणज्ञतालक्षण 'प्रयोजन' है, तथा शास्त्रारम्भस्तवविषयाप्तगुणातिशयपरीक्षा 'साधन' है.

ऐसा कह कर आचार्य विद्यानन्द अपनी अष्टसहस्री के मंगलस्तवान्तर्गत—'शास्त्रावताररचितस्तुतिगोचराप्तमीमांसितम्' —इस पद्यांश को आचार्य अकलंक की उक्ति का अनुवाद-मात्र सिद्ध करते हैं, अर्थात् आचार्य विद्यानन्द के मत में आचार्य अकलंक भी देवागम-शास्त्र (आप्तमीमांसा) को शास्त्रावताररचितस्तुतिगोचराप्त की मीमांसा करने वाला मानते

१. तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक, पृ० २.
२. तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक, पृ० ४.
३. सर्वार्थसिद्धि, पृ० १.
४. तत्त्वार्थवार्तिक, पृ० १

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थे. अपने इस अभिप्राय का स्पष्टीकरण आचार्य विद्यानन्द इस प्रकार करते हैं—'शास्त्रावतार-रचितस्तुतिगोचराप्तमीमांसितमिदं शास्त्रं देवागमाभिधानमिति निर्णयः' (अष्टशती, पृ० ३). अत्र अकलंकोक्त उस मंगलपुरस्सर-स्तव तथा स्वोक्त शास्त्रावताररचितस्तुति का समन्वय करते हुए आचार्य विद्यानन्द कहते हैं—'मंगलपुरस्सरस्तवो हि शास्त्रावताररचितस्तुतिरुच्यते. मंगलं पुरस्सरमस्येति मंगलपुरस्सरः शास्त्रावतारकालस्तत्र रचितः स्तवो मंगलपुरस्सरस्तव इति व्याख्यानात्' (अष्टसहस्री, पृ० ३). शास्त्रावतार के समय मंगलाचरण किया जाता है, अतएव 'मंगलपुरस्सर' शब्द का अर्थ हुआ शास्त्रावतारकाल. शास्त्रावतारकाल में रचित स्तव ही मंगलपुरस्सरस्तव है. अब प्रश्न उठता है, वह कौन शास्त्र है, जिसके अवतारकाल में वह स्तव किया गया है जिसमें आप्त की स्तुति की गई है ? इसका आनुषंगिक उत्तर आचार्य विद्यानन्द के इस वाक्य से मिलता है—'तदेवं निश्श्रेयसशास्त्रस्यादौ तन्निबन्धनतया मंगलार्थतया च मुनिभि. संस्तुतेन निरतिशयगुणेन' भगवताप्तेन—(अष्टशती' पृ० ३). अर्थात् वह निश्श्रेयसशास्त्र है जिसके आदि में प्रस्तुत स्तव किया गया है. यह निश्श्रेयस-शास्त्र का अर्थ है मोक्षशास्त्र या तत्त्वार्थशास्त्र. इसी स्तव के बारे में आचार्य विद्यानन्द अपनी अष्टशती का उपसंहार करते हुए लिखते हैं—'शास्त्रारम्भेऽभिष्टुतस्याप्तस्य मोक्षमार्गप्रणेतृतया कर्मभूभृद्भेत्तृतया विश्वतत्त्वानां ज्ञातृतया च भगवदर्हत्सर्वज्ञस्यैवान्ययोगव्यवच्छेदेन व्यवस्थापरा परीक्षेयं विहिता इति स्वाभिप्रेतार्थनिवेदन-माचार्याणामार्यैर्विचार्य प्रतिपत्तव्यम् (अष्टशती, पृ० २९४).

अब हम आप्तपरीक्षगत उन दो पद्यों पर विचार करेंगे जिनमें 'मोक्षमार्गस्य नेतारम्' श्लोक में प्रतिपादित आप्त की मीमांसा स्वामी समन्तभद्र द्वारा किये जाने का तथा तत्त्वार्थशास्त्र के आदि में इस स्तव के पाये जाने का उल्लेख है. वे पद्यद्वय इस प्रकार हैं :

श्रीमत्तत्त्वार्थशास्त्राद्भुतसलिलनिधेरिद्धरत्नोद्भवस्य ।
प्रोत्थानारम्भकाले सकलमलभिदे शास्त्रकारैःकृतं यत् ।
स्तोत्रं तीर्थोपमानं प्रथितपृथुपथं स्वामि-मीमांसितं तद् ।
विद्यानन्दैः स्वशक्त्या कथमपि कथितं सत्यवाक्यार्थसिद्धयै ।
इति तत्त्वार्थशास्त्रादौ मुनीन्द्र-स्तोत्र-गोचरा ।
प्रणीताप्तपरीक्षेयं विवाद-विनिवृत्तये[1] ।

प्रथम पद्य में श्रीमत्तत्त्वार्थशास्त्र की तुलना प्रकाशमान रत्नों के उद्भवस्थान समुद्र से की गई है. यहाँ श्रीमत् शब्द मननीय है. हम देख आये हैं, तत्त्वार्थशास्त्र एवं तत्त्वार्थसूत्र शब्दों का प्रयोग आचार्य विद्यानन्द ने व्यापक अर्थ में किया है. संभवतः उस व्यापक अर्थ के व्यवच्छेद के लिए यहां श्रीमत् विशेषण का प्रयोग किया गया है, जिससे श्रीमत्तत्त्वार्थशास्त्र शब्द द्वारा आचार्य उमास्वामिविरचित तत्त्वार्थसूत्र का बोध हो सके. यहाँ प्रोत्थान शब्द भी विशेष अर्थ में प्रयुक्त हुआ है. उत्थान शब्द का अर्थ है. पुस्तक[2] अतएव प्रोत्थान शब्द का अर्थ हुआ प्रकृष्ट उत्थान अर्थात् वृत्ति या व्याख्यान.[3] अतएव प्रोत्थानारम्भकाले' का अर्थ हुआ 'व्याख्यानारम्भकाले'. उक्त पद्यमें 'स्तोत्रं तीर्थोपमानं प्रथितपृथुपथम्' द्वारा प्रशस्तमोक्षमार्ग को प्रकाशित करने वाले स्तोत्र ('मोक्षमार्गस्य नेतारम्' श्लोक) की तुलना उद्भासित-विस्तीर्ण-सोपानयुक्त तीर्थ से की गई है. पद्यगत सलिलनिधि शब्द तथा श्लिष्ट प्रोत्थान शब्द आचार्य सिद्धसेन दिवाकर के निम्नोक्त स्तोत्रान्तर्गत महार्णव तथा उत्थान शब्द का संस्मरण कराता है:

---

१. आप्तपरीक्षा, पृ० २६५.

२. देखो, आचार्य हेमचन्द्रविरचित अनेकार्थसंग्रह, तृतीय काण्ड, ३८७-८

······उत्थानं सैन्ये पौरुषे युधि पुस्तके, उद्यमोद्गमहर्षेषु वास्त्वन्तेऽऽगंनचैत्ययोः ।
मलोत्मर्गे······························देखो—मेदिनी, नान्तवर्ग ४१, विश्वकोश—महेश्वरकृत, ५८-.

३. इस प्रसंग में उत्तराध्ययन सूत्र, २०।१६ का पोत्थ शब्द विचारणीय है. देखो शिष्यहिता व्याख्या तथा सर्पेन्टियर कृत नोंध.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुनिश्चितं नः परतन्त्रयुक्तिषु स्फुरन्ति याः काश्चन सूक्तसम्पदः ।
तवैव ताः पूर्वमहार्णवोत्थिता जगत्प्रमाणं जिनवाक्यविप्रुषः ।

आप्तपरीक्षा से उद्धृत प्रथम पद्यान्तर्गत 'स्वामि-मीमांसितम्' शब्द स्पष्ट रूप से स्वामी समन्तभद्र की आप्तमीमांसा का निर्देश करता है.

द्वितीयपद्यान्तर्गत तत्त्वार्थशास्त्र शब्द अविशिष्ट होने के कारण अपने व्यापक अर्थ में प्रयुक्त हुआ है. अतएव इसका अर्थ आचार्य उमास्वामि द्वारा विरचित तत्त्वार्थसूत्र मानने की कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती.

उपसंहार

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है, आचार्य विद्यानन्द की किसी भी उक्ति से यह सिद्ध नहीं होता कि 'मोक्षमार्गस्य नेतारम्' श्लोक के कर्त्ता आचार्य उमास्वामी हैं. अपितु कहीं तो ऐसा प्रतीत होता है कि आचार्य उमास्वामी से भिन्न ही अन्य कोई आचार्य इसके कर्त्ता के रूप में आचार्य विद्यानन्द को इष्ट हैं. ऊहापोह से जो दूसरी महत्त्वपूर्ण बात फलित होती है, वह है स्वामी समन्तभद्र द्वारा 'मोक्षमार्गस्य नेतारम्' श्लोक को आधार बना कर आप्तमीमांसा ग्रन्थ की रचना करना. आचार्य विद्यानन्द केवल स्वयं इस मत के पोषक नहीं, पर उनके मत में आचार्य अकलंक की भी यही मान्यता थी. इस बात को आचार्य विद्यानन्द ने अष्टसहस्री के प्रारम्भ में, जैसा कि हम ने ऊपर देखा, स्पष्ट कर दिया है. अतएव सर्वार्थसिद्धि के प्रारम्भ में उपलब्ध 'मोक्षमार्गस्य नेतारम्, श्लोक को प्राचीन बाधक प्रमाण के अभाव में पूज्यपाद देवनन्दिकर्तृक ही मानना चाहिए तथा आप्तमीमांसा के आधारभूत स्तोत्रविषयक आचार्य विद्यानन्द की मान्यता को ध्यान में रखकर ही स्वामी समंतभद्र के प्रादुर्भाव कालविषयक विचार प्रस्तुत करना उचित होगा.

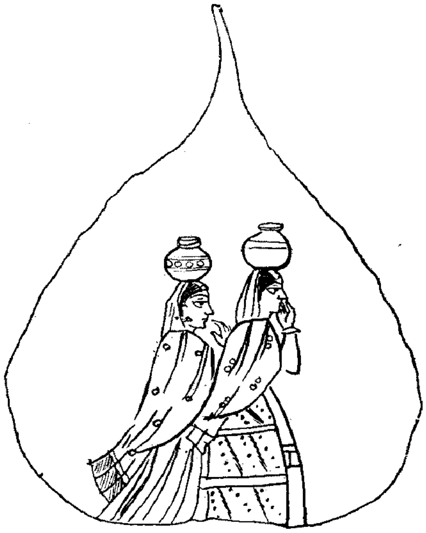

४, द्वात्रिंशद्द्वात्रिंशिका, प्रथमद्वात्रिंशिका. ३०.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org